Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233

Year-1 | Issue-3 | August-September 2012

'जीवन एक नाटक' ('मानवीनी भवाई') में ग्राम-चेतना

19वीं सदी में भारतीय भाषाओं में उपन्यास-लेखन का प्रारंभ हुआ। इसका मूल कारण अंग्रेजी ढंग का नॉवेल है। इस सदी में समाज का परिवर्तन ही कारणभूत रहा है। इसी समय ताराशंकर बंधोपाध्याय (बंगला), प्रेमचंद (हिन्दी) की तरह पन्नालाल पटेल (1921-1991) ने गुजराती में ग्राम-केन्द्री उपन्यास लिखें। इन तीनों लेखकों ने भारती साहित्य में गाँव और किसानों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है, क्योंकि उनकी लीलाभूमि है – 'ग्राम'।

पन्नालाल पटेल गुजरात-राजराजस्थान की सीमा पर अवस्थित एक छोटे-सेस गाँव मांडली (जि. डुंगरपुर अवअब राजस्थान) में किसान-परिवार में पैदा हुए। उनका शैशवकाल गाँव में बीता। उन्होंने सन् 1936 में लिखना आरंभ किया उनके मित्र कवि उमाशंकर जोशी के कहने पर। पन्नालाल आंतरिक सुझबुझ के जन्मजात साहित्यकार है और उनका अनुभव उनकी संपत्ति है। उन्होंने 18 कहानी-संग्रहों और 20 उपन्यासों लिखे हैं।

'जीवन एक नाटक' ('मानवीनी भवाई') (1947) में प्रकाशित हुआ। 1970 में उसका हिन्दी रूपांतरण डॉ. रघुवीर चौधरी ने 'जीवन एक नाटक' नाम से नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली से किया है। इसे सन् 1985 में भारतीय ज्ञानपीठ एवोर्ड से सम्मानित किया गया। उनका मूल विषय गुजरात (सन् 1900) में पड़े भयंकर अकाल के दिनों की पृष्ठभूमि हैं। उसके साथ-साथ प्रेम और विवाह का भी उपन्यास है। घटना-स्थल – उपन्यासकार का गाँव है। जिसका अँचल निकटवर्ती पहाड़ियों में रहनेवाले भील बस्ती का है। यह उपन्यास तीन भागों में विभाजित हैं। प्रथम भाग – 'मानवीनी भवाई', दूसरा भाग – 'भांग्याना भाभेरू' और तीसरा भाग – 'घम्मर वलोणु'। प्रथम भाग ही इस उपन्यास का केन्द्र-बिंदु है। इस उपन्यास को लेखक ने मक्के के खेतों के बीच मचान पर बैठकर लिखा है।

प्रस्तुत उपन्यास की प्रस्तावना में मनुभाई पंचोली दर्शक' ने लिखा है –

"'जीवन एक नाटक' *('मानवीनी भवाई')* ग्रामीण समाज की कहानी है और गति जगानेवाला बल है काल। मानो तो सारी कथा का मुख्य पात्र काल है और अन्य सभी तो उसके संकेत से खिंचते हैं। समग्र समाज को भूमिका के रूप में लेकर उस पर कालू को ही पात्र बनाकर अंतिम पच्चीस वर्षों में ठीक-ठीक सफल कही जा सके, ऐसी कथा लिखने के लिए पन्नालाल हमारे यहाँ *(गुजराती साहित्य में)* बहुतों को पथ-पदर्शक बनेंगे।"(प्रस्तावना से उद्धृत, पृ.6)

इस उपन्यास के कई प्रकरण – 'साधु की लंगोटी', 'धरती के बीज', 'बद ने बद की', 'दुखियारा परमा पटेल', 'अबोले राजू-कालू', 'युवा दंश, 'थकान के बाद विश्राम', 'तुझे क्या?', 'धरती का बोझ ढोनेवाला', 'मन के मोर', 'जीने-मरने की जुहार', 'भूखे भूत', 'माली की मृत्यु', 'मानव-जीवन का नाटक', 'ओखल में सिर राम!' और 'उज्जड आकाशर' आदि प्रकरणों महत्त्वपूर्ण है।

इस उपन्यास में उपन्यासकार ग्राम-जीवन और कृषक-जीवन की भूमिका के बीच प्रधान और गौण पात्रों को, कथावस्तु को समान रूप से आलेखित किया है। 'धरती का बोझ उठानेवाला' प्रकरण में ग्राम-जीवन की चेतना स्पष्ट रूप से – बदलते मौसमों का उदाहरण मानव-जीवन और प्रकृति दोनों का खयाल कराते हैं। जैसे –

"इस ओर गेंद-डंडे के खेलवाली मकर-सक्रांति भी आ गई। साथ-ही-साथ शिशिर में डोलती फसल के हरे वस्त्र भी लेती गई। वसंत ने पीले पटोर बिछाएँ और उन्हें भी फागुनी पवन ने खिसका लिया।... एक ओर पकी फसल पर हंसिये फिरे, दूसरी ओर होली के ढोल ढमके।" (पृ.153-154)

होली के दिनों में गाँव के पुरुष दांडिया रास से और स्त्रियाँ होली गोबर-माटी से खेलती है। इसका सजीव चित्रण गाँव की संस्कृति का उदाहरण है-

"लोगों ने दो-चार दिन के लिए हँसिया-दवरी आदि को छोड़ दिया। स्त्रियों ने गोबर-मिट्टी से फाग खेला। पुरुषों ने डंडे लेकर घेरे डाले। डूंगर-डूंगर पर, गाँव-गाँव पर, ढोल दन-दन, होली की ज्वालाएँ घूमती रहीं... और सो भी उन निरे पागत बने फगुहारों के बीज, 'जाति है, होली जाती है...ईई*!* अररर*!*" (पृ.154)

'पृथ्वी का भार ढोनेवाला पशु' भारतीय किसान-जीवन का एक भव्य प्रकरण है। इसमें गुजरात के गाँवों, बल्कि भारत वर्ष के गाँवों में रहनेवाले किसान-कुनबी-परथमी के पोठी सारी पृथ्वी का भार उठानेवाले हैं। उसमें उसका गौरव, उनकी वेदना भी है, तो दूसरी तरफ समाज के लोग उनका कैसे शोषण करते हैं। उसका सजीव चित्रण देखिए –

"और फिर भी किसान दु:खी! तब फिर भगवान के घर न्याय या अन्याय? जनम लिया तभी से कड़ी मेहनत! किसीकिकिसी तरह का सुख ही नहीं! न खान खाने-पीने का, न औरतों --"

कालू की बीच रामा बोल उठा, न"अरे! पागल, हमीं तो पृथ्वी के पालक कहाए! हमारे वे टेकी महाराज कहते थे सो तूने नहीं सुना था कि ज्यों माँ-बाप कोको बच्चों की चिंता त्यों किसकिसकिसान को दिदुनिया की --"(पृ.157)

प्रस्तुत उपन्यास में साठ साल के वाला डोसा कालू के जन्म की बधाई स्वीकारते हुए बूढा वाला डोसा भावुक हो जाते हैं –

" 'भाई बधाई हो! भाभी ने बेटे को जन्म दिया।'

बूढा फटी आँखों से और फटे मुँह से देखता रहा। न तो उससे हँसा गया, न वह रो पाया, न उसके मुँह से कोई आवाज़ निकली।" (पृ.5)

जन्मे बालक को धरती की गोद में छोड़ देने की उदारतापूर्ण इच्छा एक बूढ़ बाप के मुख से निकले गीत की पंक्तियाँ देखिए –

"देव-देवीने पारे मेलतां
सौ रो मरघां ने बकरां शां ढोर।
पण मारे धरतीने खोळे मेलवो
मोंघी माटीनो रमतेरो मोर।" (पृ.7)

गुजरात के गाँवों में किसान परिवारों में शादी-ब्याह और गौना आदि अवसरों पर अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए क्या-क्या खेल खेलते हैं। यह बात राजू और कालू दोनों की शादी होनेवाली थी, पर उसी दिन उनको अलग कर दिये जाते हैं। साथ-साथ पेथा पटेल के द्वारा आंजणा पाटीदारों के रीति-रिवाजों का वास्तविक चित्रण किया है। जब राजू के साथ कालू की सगाई तुड़वाने पर मामा मनोर क्रोधित हो जाते हैं –

"राजुडी को तो – क्या करूँ हीन करम की जनमी है सो सभी के लिए सिर निचा करने का समय आया है। राजा भोज की लड़की गंगू तैली के घर देनी पड़ी हमें।" (पृ.54)

भारतीय किसान समाज में औरतों शादी-ब्याह-गौने के अवसर पर स्त्रियाँ के मुक्तकंठ से गीतों गाती हैं। इन गीतों द्वारा पन्नालाल ने आंजणा पाटीदारों के रीति-रिवाजों का परिचय करवाया है। जैसे-

"एक तो गरमी का फूरसती दिन, उसमें फिर लग्न-प्रसंग; वह भी सबसे पहले लग्न पूजने के बाद युवतियों ने आँगन में घेरा डाला। युवक भी छंट-छंट कर आने लगे, गीत में शामित होने लगे।" *(पृ.58)*

"उगमणी धरतीमां केसर ऊडे छे ओ रेसमा।
उगमणी धरतीमां केसर ऊडे छे रे लोल।
मीं जाण्युं नणदीनो वीरो आवे छे ओ रेशमा।
मीं जाण्युं नणदीनो वीरो आवे छे रे लोल।" (पृ.59)

(हे रेशमा, पूरब की धरती में ऊड़ रहा है केसर! मुझे लगा कि आ रहा है ननद का भाई।)

"हरी गलनुं छोगुं ने गलनो गोटो केशरिया लाल,
कहो तो साह्यबा घोडिला वोंरी आलु केशरिया लाल।" (पृ. 78)

(गुल की कलगी और गुल का गुच्छा, कहें तो हे साजन, सुंदर घोड़े भी खरीद दूँ।)

"एक झालावाड़ी सुपारीनुं झाड़ छे,
अमारा कालूभाईने टूंपयानी होंश छे,
वेवाई ना मले तो अमने केई मेल
झालावाड़ी सोपारीनुं झाड़ छे।" (पृ.81)

(एक झालावाड़ी सुपारी का पेड़ है। हमारे कालू भाई को सोने की हंसली की उम्मीद है। हे समधी, तुझे न नमिल पाएँ तो हम से कह दो।)

इन गीतों में ग्राम-जीवन की संस्कृति की झलक देखने को मिलती है।

भारतीय समाज में औरतों को हल चलाना कलंक माना गया है। अगर चलाती है तो अकाल पड़ जाता है। हल हाँकनेवाली औरत पर हेंगा चलाने के बाद अकाल दूर हो जाता है। ऐसी मान्यता क्षेत्र-विशेष के लोगों के लोकमानस की सोच को उपन्याकार ने हू-ब-हू वर्णन किया है। जैसे-

"हम पटेलों की जाति में तो भूलचूक से हल की छड़ी पर हाथ रख दिया तो तबाही हो जाती है। गजब हो गया...!" *(पृ.44)*

"इतने में ही वर्षा की कमी लगने लगी और माली ने मौका पा लिया, घूमते-फिरते कहना शुरू किया :
'औरत जात ने हल की छड़ी पर हाथ रखा है। बारिश की एक बूँद भी पड़े तो करना याद, माली क्या कहती थी?" (पृ. 46)
फूली माँ डाईन के पात्र के माध्यम से ग्रामीण समाज में व्याप्त अंधश्रद्धा का हृदयस्पर्शी वर्णन किया है।

"मुँह कैसे बाँधने जाएँ? ..और मेरा क्या नहीं है? शंकर-सा आज्ञाकारी बेटा है और बेटे के घर बेटी है। मैं डाकिन होती तो अपने संतानों को ही न खा जाती?" (पृ.21)
उपन्यास के आरंभिक छह प्रकरणों में वाला पटेल का रेखाचित्र है। उनके माध्यम से लेखक ने सदियों पुराने गाँव जिसके कारण टिक हुए हैं, वह झगड़ा टालने की वृत्ति है, दूसरी बात है दु:रव में से पराजित न होने की, पलायन करने की। इसका सहज वर्णन किया है –
"मत बोल! मत बोल! भगवान ने खुशी से दिया होगा तो उसका कुछ नहीं बिगड़ सकेगा। जा तू घर में चली जा। रार से बढ़कर दुनिया में कोई शाप नहीं।" (पृ.13)
ग्राम-जीवन में असांप्रदायिकता कासम तैली के पात्र द्वारा व्यक्त हुई है। वह रूपा चाची के सबसे अधिक शुभ-चिंतकों में से एक है।
"परंतु कासम ने तो बिल्कुल इनकार कर दिया, गाँव में तो क्या, पर सारी दुनिया में अकाल पड़े तो भी इस जुबान से तो रूपा चाची ऐसा नहीं कहा जा सकता कि आप चलिए। और मैं तो इसे मानता भी नहीं हूँ भाई, सच बात तो यही है।(पृ.47)
इस उपन्यास में छप्पनिया अकाल का वर्णन राजू-कालू के प्रेम-कथा को भूलाकर हमें अकाल की विनाश-लीला का वर्णन प्रधाप्रधान बन जाता है। संसार में सबसे खराब कोई है, तो वह भूख। उस भूख तांडव हमें अअकाल के दिनों में देखने को मिलता है।कालअन
"गिद्धों की तरह ही हो रहा था, कोई उन बच्चों को धक्का दे रहा था, तो कोई बूढ़िया खून पी रही थी। ढोर के एक-एक पैर दो-दो जने बत्ती से काटते थे, जबकि वे दोनों, जो तलवार लेकर चढ़ बैठे थे, माँस काटकर, लंगोटी के बगल में दबाते या फिर पेट और जांघ के बीच। तलवार का डर था। फिर भी कोई एकाध लौंदा खींच ही लेता।
कालू सिहर उठा। उसके रोम-रोम खड़े हो गये। सीमरना तो दूर, आँखों में आँसू आ गए, 'अरेम! तेरी जड़ निकल जाए भगवान मनुष्य के जायों की यह दशा!' डुंगडुंगर फट जाए ऐसा नि:श्वास छोड़ते बोला, 'जगत में सबसे बुरा अगर कुछ है तो एक यह भूख ही है!" (पृ.144)
भय और भूख से पीड़ित लोगों को कालू पड़ोस के कस्बे –शहर डेगडिया ले जाता है। वहाँ जगत का पालनहार किसान भी राजमार्ग पर भीख माँग रहा है। औरतें पेट भरने के लिए देह बेच रही है, जिनमें कालू की बहू भली है। यहाँ भूख के साथ वासना को भी संतुष्ट करनेवाले अन्य पात्रों और कालू केबीच अंतर कुछ भी दिखाई नहीं देता। शंकरदा के कथन से स्पष्ट होता है –
"ऐसे वक्त में लाज और आबरू की फिक्र क्या ककरें, कालू! अअच्छी है धरती कि सभी को चलन देती है!" (पृ.221)
अकाल के दिनों डेगडिया महाजन सदाव्रत खोलता है। कालू जैसे स्वमानी भारतीय कृषक को कतार में खड़े रहकर भीख लेने में लज्जा आती है। वह काल के सामने लड़ता है, भीख नहीं माँगता. वह राजू को कहने पर पहली पंक्ति में से निकल जाता ह। सिपाही कालू को धमकाता है, तब कालू विवश होकर बोल देता है –
"लाट होता तो ले जाता, किसान हूँ, इसीलिए नहीं लूँगा।" (पृ.229)
यहाँ एक किसान की सच्ची खुमखुमारी और अनाज को पैदा करनेवाले किसान मुट्ठीभर अनाज के लिए बिलबिलाना। अकाल में मनुष्य की क्रूरता अमर्यादित हो जाती है, पर अपने स्वमान के साथ समाधान करके आत्मश्रद्धा को खोनी नहीं चाहिए। कालू राजू को कहता है –
"तुझे मालूम है? भीभीख से बूरी भीख है। भूख तो हड्डी-माँस गला देती है, पर यह भीख तो - 'कालू मानो अपने-आप से ही बक रहा था। राजू! ससच कहता हूँ, यह हमारे गुमान को, आत्मा को गला देती है। पानी कर देती है। और याद रखना-" (पृ.231)
समग्र उपन्यास में खलनायिका, ईर्षालू और षड्यंत्र खेलनेवाली माली को डेगडिय जाने से पहले धाडवावाले दुष्ट माली को मार डालते हैं। जिंदगीभर कालू को 'कलमुँहा' कहनेकहनेवाली माली की मृत्यु हो जाती है। उसके नग्न शरीर पर कालू अपने सिर का फेटा डालकर ढंकता है। चाँदी की अपनी अँगूठी में से एक टुकड़ा निकाल कर माली के मुँह में डालकर अंतिम विधि पूरी करता है –
"कालू ने मन में इन बेबेटों के प्रति भारी घृणा जगी। अपनी अँगूठी तोड़कर बुढिया के मुँह में वह एक टुकड़ा रख आया।" (पृ.203-204)
यहाँ एक कृषक की सच्ची मानवीयता का दर्शन करवाया है।
प्रस्तुत उपन्यास में पन्नालाल ने साबरकांठा के बहाने उस आँचल के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा प्राकृतिक परिवेश का चित्रण किया है। दर्शक के शब्दों में –
"'जीवन एक नाटक' ('मानवीनी भवाई') किसान-समाज की कथा है, सो खेती के अलग-अलग मौसमों के हू-ब-हू वर्णन जगह-जगह परपर उभर आएँ हैं। (प्रस्तावना से उद्धृत, पृ.15)
विशेष रूप से 'साधु की लंगोटी', 'धरती का बोझ ढोनेवाला' और 'भनक' – तीनों प्रकरणों में ग्रामीण लोगों के मानस, उनकी मान्यताएँ, रुचियों-परंपराओं, रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों आदि का वर्णन मिलता है। ग्रामीण समाज की इस कथा के सभी पात्र गाँव में जन्मे-पले-

बढे हैं, इसीलिए वे ग्राम-चेतना को साकार करने में सहायक बने हैं। मुख्य तथा गौण पात्रों के द्वारा पन्नालाल ने मानव-मन की सूक्ष्म-से-सूक्ष्म गतिविधियों को बारिकी से प्रस्तुत किया है।

संदर्भ-ग्रंथ:

'जीवन एक नाटक', नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, तृतीय आवृत्ति-1999

****

डॉ. अमृत प्रजापति
हिन्दी विभागाध्यक्ष
सरकारी आर्ट्स एवं कॉमर्स कॉलेज, कडोली